[Conference-Composition of Colours :December,2014] ISSN- 2350-0530
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v2.i3SE.2014.3604

INTERNATIONAL JOURNAL of
RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

भारतीय फिल्म संगीत में रसानुकूल रंग–संयोजन

डॉ. स्मिता खानवलकर
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
कंठ संगीत विभाग, म.ल.ब. शा. स्ना. कन्या महा. किला भवन, इन्दौर

मानव–सभ्यता के साथ–साथ कलाओं का विकास हुआ। चौसठ कलाओं में संगीत–कला, चित्र–कला और काव्य–कला विषेष महत्व रखती हैं। इनमें भी संगीत–कला अधिक प्रभाव डालने वाली कला है। मनुष्य के हृदय में सुप्त भावों को जागृत करने में संगीत जितना सक्षम है, उतनी और कोई विद्या नहीं। जो भाव चित्र के माध्यम से व्यक्त नहीं किये जा सकते, उन्हें काव्य या भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त किया जा सकता हैं और जिन भावों को व्यक्त करने में भाषा भी असमर्थ रहती है, उन्हें संगीत सहज ही व्यक्त कर देता है।।शॉपेन हॉवर का कहना है – ''केवल संगीत ही ऐसी कला है, जो श्रोताओं से सीधा संबंध रखती है। इसे किसी भी माध्यम की आवश्यकता नहीं होती।''

कलाकार के अंतरंग से छेड़ा हुआ सुर श्रोता के अंतस् को छूकर उसे दिव्य लोक में प्रतिष्ठित कर देता है।

जिस प्रकार मूल रंग सात होते हैं अथवा मूल रसना–रस छः होते हैं, परंतु नेत्र और जिव्हा केवल उनसे तृप्त नहीं होते अपितु उनके असंख्य भेदों की और उनमें तालमेल कर नयी रसनिष्पत्ति की भी इच्छा रखते हैं, ठीक उसी प्रकार मनुष्य के कान भी केवल मूल सात स्वरों की ध्वनियां सुनकर पूर्ण तृप्त नहीं होते, अपितु नित्य नूतन स्वर–सन्दर्भों के उद्भव से ही संतुष्ट होते हैं। हर्ष, शोक इत्यादि चित्तवृत्तियों का जब नाद के स्पन्दन में स्थित श्रुतियों से तादात्म्य होता है तो मनुष्य की चेतना स्थिर होती है और उस स्थिर अवस्था में ही सौन्दर्य बोध होता है। यही तद्गत शब्द सार्थक होता है।

मन की यह साम्यावस्था इस बात की सूचक है कि उस जीव ने इस सृष्टि में रहते हुए ही उसे जीत लिया है क्योंकि इस अवस्था में सुख–दुःख के अतीत जाकर वह ब्रम्हपद पर आरूढ़ हो गया है। रसमग्न व्यक्ति केवल आनन्द का पथिक है। सुख–दुख एक–दूसरे के पूरक (Relative Terms) हैं, एक के बिना दूसरा सम्भव नहीं – 'रात जितनी भी संगीन होगी, सुबह उतनी ही रंगीन होगी' पर आनंद का न कोई पर्याय है न विलोम ही।अभिव्यक्ति का पहला माध्यम मौखिक है। प्राणिमात्र में चेष्टा और ध्वनि के द्वारा भावों को प्रकट करने की लालसा स्वभाव से ही होती है। चेष्टा को यदि नाद की सहायता मिल जाए तो उसका प्रभाव वृहद् एवं व्यापक हो जाता है। चेष्टा ने 'नाट्य' को जन्म दिया है और ध्वनि अथवा नाद से भाषा और संगीत की सृष्टि हुई है। संगीत कला के अन्तर्गत गीत, वाद्य और नृत्य अर्थात् शब्द, स्पर्ष और चेष्टा आते हैं।

मनुष्य के हृदय में स्थायी भाव सदैव विद्यमान रहते हैं। उन भावों के उद्दीपन से ही रसोत्पत्ति होती है और उस रस से कलाजन्य सौन्दर्य की अभिव्यक्ति होती है। केवल सहृदय व्यक्ति ही उस रस का अनुभव कर सकता है। हर्षातिरेक की अवस्था में जो प्रमुदित न होता हो, शोक की अवस्था में जिसके नेत्रों में अश्रु न भर आते हों, वियोग की स्थिति में जो संतप्त न होता हो, देषभक्ति के नारे लगाते समय जिसके रोंगटे खड़े न होते हों, ऐसे व्यक्ति को रसमर्मज्ञ अथवा भावुक नहीं कहा जा सकता।जब कोई करूणा–व्यंजक गीत हम सुनते है तो हमारे अन्तःकरण में स्थित करूणभाव के साथ उसका स्वाभाविक संवाद होने लगता है। परिणामतः उस समय हमें आनंद की अनुभूति होने लगती है। संगीत द्वारा उत्साह, विनोद, भक्ति, करूणा आदि किसी भी भाव की सृष्टि हो, परंतु उसका परिणाम आनंद ही होता है।

संगीत की सौंदर्यषक्ति के द्वारा मानव–मन में स्थित स्थायी भावों को जागृत कर, उन्हें उद्वेलित कर उसे रसमग्न कर देना कलाकार का लक्ष्य होता है, और यही प्रयास इस शोधपत्र के माध्यम से किया गया है।सौन्दर्यबोध की दृष्टि से किसी श्रोता का संगीतमर्मज्ञ होना आवष्यक नहीं है क्योंकि संगीत समझने की नहीं अपितु अनुभव करने का भाव है। शब्द समझा जाता है और स्वर अनुभव किया जाता है और यही कारण है कि हम जीवन में घटित अनेक घटनाओं की 'जीवन के अलग–अलग रंग' की संज्ञा दे देते हैं।स्वरों के साथ रंगों का घनिष्ठ संबंध है। किसी भी स्वर को रंग में व रंग को स्वर में परिवर्तित किया जा सकता है जो विज्ञान सिद्ध तथ्य है। यदि हम रंगों से उद्भूत सौन्दर्य बोध पर विचार करें तो महसूस करेंगे कि कोई भी रंगीन वस्तु हमें केवल इसलिए प्रभावित नहीं करती कि वह रंगीन है, वरन् हमारा मन, हमारी बुद्धि, हमारा अवचेतन वहीं शांत होते हैं, जहां रंगों में संयोजन, अनुक्रम, अनुपात और उनमें मूर्त षिल्प हमारे अन्तः पटल पर प्रतिबिम्बित होकर विचार में स्थित ध्वनि बिन्दुओं के साथ तादात्म्य स्थापित करते हैं। यहां अव्यक्त रूप में ध्वनि और रंग का ऐसा मेल होता है, जिससे रसोद्रेक हो जाता है। रंग के पीछे नाद की स्थिति होती है और रंग के प्रति मन में जो विचार उत्पन्न होता है, उसके पीछे भी नाद कारण होता है।

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

इन दो नादों में जब भी साम्यावस्था होती है, तभी सौन्दर्य की सृष्टि हो जाती है। यह प्रक्रिया अत्यन्त सूक्ष्म होती है और यही कारण है कि स्थूल रूप में इस प्रक्रिया से मनुष्य अप्रभावित रहता है। मन की इस सहज साम्यावस्था की स्थिति में जो भी रंग ऑखों को दिखाई देगा अथवा जो भी नाद कानों से सुनाई देगा, वह सदैव सुन्दर एवं अतीन्द्रिय ही होगा।

संगीत अथवा अन्य किसी भी कला के माध्यम से सौन्दर्य के सीमित एवं असीमित स्वरूप का दर्षन करना अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक सुगम है। संगीत कला की विषेषता यही है कि इसके नाद–सौन्दर्य को किसी शुष्क शब्द, स्पर्ष, रूप जिव्हा–रस, गंध, कथ्य अथवा घटना की अपेक्षा नहीं होती। वरन् सात स्वरों में वह ताकत होती है कि वे मनुष्य को उसकी भावनाओं एवं संवेदनाओं के उच्चतम षिखर पर पहुँचाकर जीवन में अन्तर्निहित विविध रंगों का आस्वाद ले सके।भारतीय शास्त्रीय संगीत में भी प्रत्येक राग एक रंग लिए हुए हैं, यहां रंग से तात्पर्य शाब्दिक न होते हुए भावनिक है। केवल सात शुद्ध एवं पाच विकृत स्वरों से हजारों राग निर्मित हुए हैं। उन्हें अलग–अलग कैसे प्रस्तुत किया जाए, उनका एक–दूसरे से अलग प्रभाव श्रोताओं को किस प्रकार सराबोर करें ? यह उनमें प्रयुक्त किये जाने वाले स्वरों के लगाव, अभिव्यक्ति तथा प्रस्तुतिकरण पर निर्भर है। भारतीय फिल्म संगीत में भी कई गीत शास्त्रीयता का रंग लिये हुए हैं। आरंभिक दौर में तो कई फिल्मों में केवल रागाधारित गीत। बन्दिषें समाविष्ट हैं, जैसे – संगीत सम्राट तानसेन, चित्रलेखा, आम्रपाली, बैजूबावरा इत्यादि। आधुनिक काल में भी कई ऐसी फिल्में हैं, जिनमें शास्त्रीय रागों/गीतों का कुषलता पूर्वक संयोजन किया गया है।

इस शोधपत्र में कुछ इसी तरह के Moods, Colours और Expressions (भाव, रंग एवं अभिव्यक्तियॉ) को दर्षाने का प्रयास किया गया है, और साथ ही दृष्य/श्रव्य के माध्यम से श्रोताओं और दर्षकों के मानस में यह भी अंकित करने का प्रयास किया गया है कि फिल्म संगीत में स्वरों के माध्यम से किस प्रकार रस–निष्पत्ति होती है और सामान्य जनमानस उसका आनन्द लेते हुए अपने जीवन के विभिन्न रंगों से किस प्रकार दो–चार होता है।

संदर्भ :

डॉ. प्रभा अत्रे
निबंध संगीत – संगीत कार्यालय, हाथरस